

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 4: विदुर का महर्षि मैत्रेय के पास जाना

13 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



अपने ही कुल के विनाश के मध्य, भगवान् अकेले एक पीपल वृक्ष तले सरस्वती-तट पर विराजमान हैं — और उसी शान्ति से आशीर्वाद की एक शृंखला आरम्भ होती है: श्रीकृष्ण से उद्धव तक, उद्धव से विदुर तक, विदुर से मैत्रेय तक, और मैत्रेय के माध्यम से, अन्ततः, हम तक।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। यह अध्याय तृतीय अध्याय में आरम्भ हुए संवाद को सीधे आगे बढ़ाता है, जहाँ उद्धव, यमुना के तट पर विदुर से मिलकर, यदुवंश के भीषण अन्त तथा भगवान् श्रीकृष्ण के साथ अपनी अन्तिम, अपूर्व भेंट का वर्णन करना आरम्भ कर चुके थे। चतुर्थ अध्याय उस वर्णन को पूर्ण करता है। उद्धव

यदुओं के मदिरापान से हुए आत्म-विनाश का, सरस्वती के तट पर एक पीपल वृक्ष के नीचे अकेले तेजोमय बैठे भगवान् को पाने का, वहाँ भगवान् द्वारा दी गई अन्तरंग शिक्षा का, तथा भगवान् के इस निर्देश का वर्णन करते हैं कि वे बदरिकाश्रम की ओर प्रस्थान करें। शोकाकुल किन्तु धीर विदुर तब उद्धव से वही ज्ञान माँगते हैं — और उद्धव, विनम्रतापूर्वक, उन्हें उस व्यक्ति की ओर संकेत करते हैं जिसने वह ज्ञान सीधे भगवान् के मुख से प्राप्त किया था: महर्षि मैत्रेय। राजा परीक्षित श्रीशुकदेव की कथा के मध्य एक स्वाभाविक प्रश्न पूछकर संक्षिप्त व्यवधान डालते हैं, और अध्याय का समापन विदुर के पुनः अकेले गंगा के तट की ओर, उस महर्षि को खोजने के लिए प्रस्थान करने से होता है, जो अन्ततः उसी प्रश्न का उत्तर देंगे जिससे यह सम्पूर्ण ग्रन्थ आरम्भ हुआ था।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध)
- अध्याय: 4 (चतुर्थ अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: उद्धव के निर्देश पर विदुर का महर्षि मैत्रेय के पास जाना
- मुख्य वक्ता: उद्धव (विदुर को अपना वृत्तान्त सुनाते हुए); श्रीशुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए); विदुर (संक्षेप में, उद्धव से); तथा राजा परीक्षित (एक प्रश्न पूछते हुए) — यह सम्पूर्ण कथा सूत गोस्वामी द्वारा ऋषि शौनक तथा नैमिषारण्य की सभा को सुनाई जाती है
- मुख्य श्रोता: विदुर (उद्धव के सम्बोधन के भीतर); राजा परीक्षित (श्रीशुकदेव की कथा के भीतर); तथा ऋषि शौनक एवं नैमिषारण्य का ऋषि-समुदाय (सूतजी से सुनते हुए)
- मुख्य स्थान: सरस्वती नदी का तट (उद्धव के स्मरण में, एक पीपल वृक्ष के नीचे), यमुना नदी का तट (जहाँ उद्धव और विदुर बात कर रहे हैं), तथा अन्त में गंगा के तट की ओर मार्ग, जहाँ अध्याय की समाप्ति पर विदुर जा रहे हैं
- मुख्य विषय-वस्तु: यदुवंश का अन्तिम विनाश, पीपल वृक्ष के नीचे भगवान् से उद्धव की अन्तिम शिक्षा, भगवान् का उद्धव को बदरिकाश्रम जाने का निर्देश, तथा शोकाकुल विदुर को महर्षि मैत्रेय की ओर उद्धव द्वारा भेजा जाना
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 3, अध्याय 4, श्लोक 1–36
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

यदुओं का आत्म-विनाश, पूर्ण हुआ

चतुर्थ अध्याय, मानो वाक्य के मध्य से ही, विदुर को सुनाए जा रहे उद्धव के वृत्तान्त को पिछले अध्याय से आगे बढ़ाता है। यदु वीर, उन ब्राह्मणों की अनुमति से भोजन कर चुकने के पश्चात्, जिनके शाप ने शीघ्र ही उन सबका विनाश करना था, वारुणी नामक मादक सुरा पीने लगे। मदिरा से बुद्धि भ्रष्ट होकर, वे कटु वचनों से एक-दूसरे पर प्रहार करने लगे, और सूर्यास्त होते-होते यह विवाद हत्या में बदल गया — बन्धु के विरुद्ध बन्धु, “एक-दूसरे से रगड़ खाते बाँसों के समान” जब तक कि घर्षण से ही अग्नि उत्पन्न न हो जाए। यह सम्पूर्ण भागवत में सबसे मार्मिक चित्रों में से एक है: एक सम्पूर्ण वंश, जो जीवनभर स्वयं भगवान् की प्रत्यक्ष उपस्थिति से सुरक्षित रहा, एक ही सन्ध्या में मदिरा तथा क्रोध से नष्ट हो जाता है।

अथ ते तदनुज्ञाता भुक्त्वा पीत्वा च वारुणीम् ।

तया विभ्रंशितज्ञाना दुरुक्तैर्मर्म पस्पृशुः ॥ १ ॥

atha te tad-anujñātā bhuktvā pītvā ca vāruṇīm tayā vibhramśita-jñānā duruktair marma pasprśuḥ

अर्थ: उद्धव ने आगे कहा: फिर, उन ब्राह्मणों की अनुमति से भोजन करने के पश्चात्, उन्होंने मदिरा पी, और नशे से बुद्धि खोकर एक-दूसरे को कटु वचनों से मर्मान्तक चोट पहुँचाई। (स्कन्ध 3, अध्याय 4, श्लोक 1)

यह सब देखते हुए, स्वयं भगवान् — जिन्होंने अपने ही वंश के इस अन्त को इसलिए चाहा था कि जगत् पर से अतिरिक्त भार हल्का हो सके — शान्तिपूर्वक उस नरसंहार से हट गए। उन्होंने सरस्वती का जल पिया और तट के निकट एक पीपल वृक्ष के नीचे बैठ गए। उससे पूर्व, द्वारका में ही, भगवान् उद्धव से कह चुके थे कि वे आगे बदरीवन की ओर जाएँ, जहाँ दिव्य ऋषि नर और नारायण अब भी अपनी कठोर तपस्या में लीन हैं। किन्तु उद्धव, भगवान् के चरणों से एक क्षण भी विलग न रह सकने के कारण, उनके पीछे-पीछे चले गए थे।

पीपल वृक्ष के नीचे अकेले भगवान् को पाना

आगे उद्धव जो वर्णन करते हैं, वह भागवत के इस भाग के सबसे कोमल तथा चित्रात्मक अंशों में से एक है। अपने प्रिय भगवान् को ढूँढ़ते हुए, उन्होंने उन्हें सरस्वती के तट पर सर्वथा अकेला बैठा पाया — वही भगवान् जो, वास्तव में, समस्त प्राणियों की शरण हैं, किन्तु यहाँ, विरोधाभासी रूप से, स्वयं शरणहीन प्रतीत हो रहे थे। उनका स्वरूप एक तेजस्वी श्याम वर्ण का था, पूर्णतः सात्त्विक, रजोगुण के किसी मिश्रण से रहित; उनके नेत्र रक्ताभ किन्तु अत्यन्त कोमल थे; तथा उन्हें उनकी चार भुजाओं और पीत रेशमी वस्त्र से तुरन्त पहचाना जा सकता था। वे एक युवा अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष के सहारे बैठे थे, अपने दाहिने चरण को बाईं जंघा पर रखे हुए, इन्द्रिय-सुखों का त्याग कर चुकने पर भी आनन्द से परिपूर्ण।



सरस्वती के तट पर अकेले, भगवान् एक पीपल वृक्ष के नीचे तेजोमय शान्ति में विराजमान हैं, अपने दाहिने चरण को बाईं जंघा पर रखे हुए, अपने ही वंश के विनाश से दूर हटकर (श्लोक 3-8)।

ठीक इसी क्षण, विभिन्न लोकों में विचरण करते हुए, संयोगवश महर्षि मैत्रेय वहाँ आ पहुँचे — जिन्हें यहाँ भगवान् के महान् भक्त तथा महर्षि द्वैपायन (वेदव्यास) के स्नेही मित्र एवं सहपाठी के रूप में वर्णित किया गया है। मैत्रेय एकाग्रचित्त होकर सुनते खड़े रहे, आनन्द तथा भाव-विह्वलता में सिर झुकाए हुए, जबकि भगवान् श्रीकृष्ण — साक्षात् मुक्तिदाता — उद्धव से बोलने लगे, अपनी स्नेहिल मुस्कान तथा वात्सल्यपूर्ण दृष्टि से उन्हें उस शोक के मध्य भी तरोताज़ा करते हुए।

उद्धव को भगवान् की अन्तिम शिक्षा

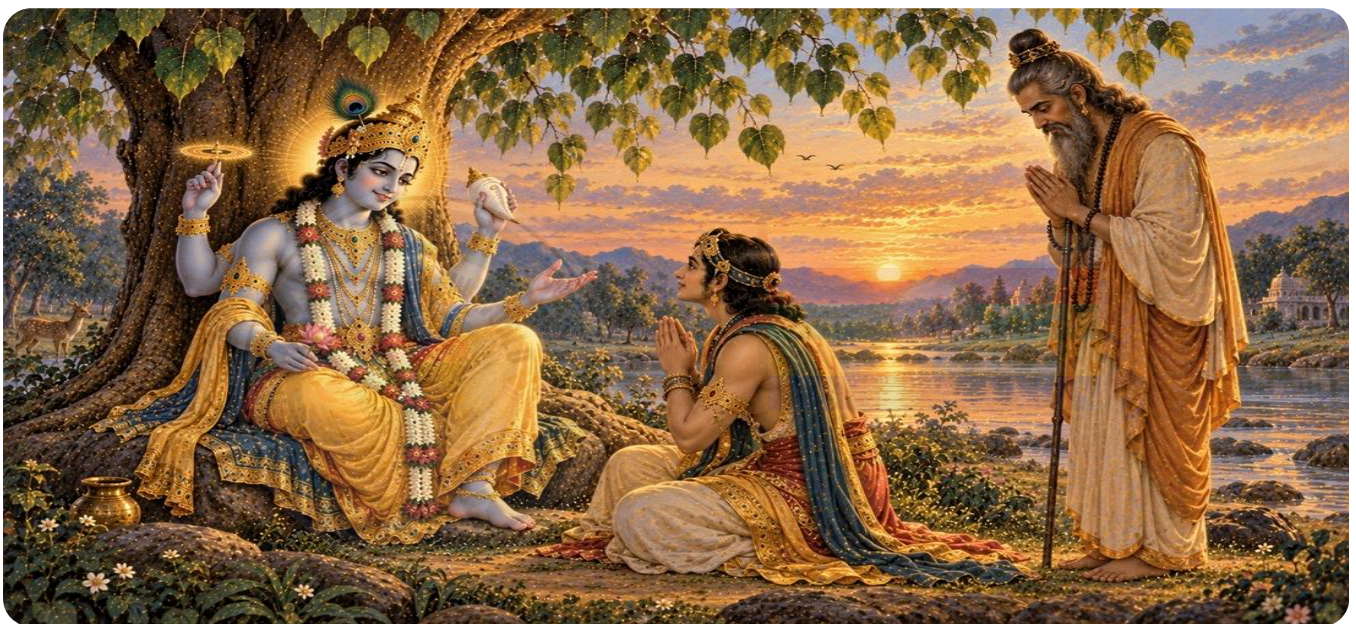
आगे भगवान् जो कहते हैं, वह इस अध्याय का भावनात्मक तथा सैद्धान्तिक केन्द्र-बिन्दु है। उद्धव के हृदय में अन्तर्यामी के रूप में निवास करते हुए, भगवान् कहते हैं कि वे उनके हृदय की इच्छा पहले से ही जानते हैं, और अब वह प्रदान करने आए हैं जो अन्यो के लिए दुर्लभ है। वे उद्धव को एक पूर्वजन्म का स्मरण कराते हैं — एक जीवन, जिसका विस्तृत ब्रह्माण्ड-विज्ञान इस स्कन्ध में आगे चलकर प्रकट होगा — जिसमें उद्धव वसुओं में जन्मे थे तथा प्रजापतियों एवं वसुओं द्वारा संयुक्त रूप से किए गए यज्ञ में, केवल भगवान् को प्राप्त करने के उद्देश्य से, उनकी आराधना की थी। यह वर्तमान जन्म, भगवान् कहते हैं, निश्चय ही उद्धव का अन्तिम जन्म है, क्योंकि उन्होंने इस जीवन में भगवान् की कृपा अर्जित कर ली है; वे वास्तव में भाग्यशाली हैं कि उन्होंने इस एकान्त स्थान में, अपनी अनन्य भक्ति के बल पर, उस समय भगवान् के दर्शन किए जब भगवान् इस मर्त्यलोक को त्यागकर अपने नित्य धाम लौटने की तैयारी कर रहे हैं।

पुरा मया प्रोक्तमजाय नाभ्ये
पद्मे निषण्णाय ममादिसर्गे ।
ज्ञानं परं मन्महिमावभासं
यत्सूरयो भागवतं वदन्ति ॥ १३ ॥

purā mayā proktam ajāya nābhye padme niṣaṇṇāya mamādi-sarge jñānaṁ paramā man-mahimāvabhāsaṁ yat sūrayo bhāgavataṁ vadanti

अर्थ: [मैं तुम्हें वह सर्वोच्च ज्ञान प्रदान करने जा रहा हूँ] जो मेरी महिमा को प्रकट करता है, जिसे मुनिजन ‘भागवत’ के नाम से पुकारते हैं, तथा जिसे मैंने सृष्टि के आरम्भ में, मेरी नाभि से उत्पन्न कमल पर विराजमान ब्रह्मा को एक पूर्व-कल्प में सिखाया था। (स्कन्ध 3, अध्याय 4, श्लोक 13)

यह एक श्लोक शान्तिपूर्वक कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण करता है: यह उसी शिक्षा का नाम लेता है जिसे यह स्कन्ध अब प्रकट करने वाला है — वह “भागवत” ज्ञान जो सर्वप्रथम सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मा को दिया गया — तथा उसके अगले प्राप्तकर्ता के रूप में उद्धव को, यहाँ, पीपल वृक्ष के नीचे इस अन्तिम घड़ी में, चिह्नित करता है। तृतीय स्कन्ध में आगे के हर चरण, विदुर को मैत्रेय के दीर्घ उपदेश तक, इसी एक हस्तान्तरण-क्षण से जुड़े हैं।



पीपल वृक्ष के नीचे भगवान् उद्धव से स्नेहपूर्वक बोलते हैं, यह प्रकट करते हुए कि यह उनका अन्तिम जन्म है तथा उन्हें सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मा को दी गई सर्वोच्च शिक्षा का वचन देते हुए, जबकि महर्षि मैत्रेय पास ही मौन विभोर होकर सुन रहे हैं (श्लोक 9-13)।

उद्धव का काँपता हुआ उत्तर

अभिभूत होकर, उद्धव जुड़े हुए हाथों से, काँपते स्वर में, रोमांचित शरीर तथा अश्रुपूरित नेत्रों से उत्तर देते हैं। वे भगवान् से एक ऐसा प्रश्न पूछते हैं जो केवल उसी हृदय से आ सकता है जो पहले ही सांसारिक कामना से मुक्त हो चुका हो: मनुष्य के जीवन के चार परम्परागत लक्ष्यों में से — धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष — भगवान् के चरण-कमलों के भक्तों के लिए इनमें से कौन-सा प्राप्त करना कठिन है? और फिर भी, उद्धव कहते हैं, वे इनमें से किसी की भी कामना नहीं करते; उनकी एकमात्र इच्छा उन्हीं चरणों की आराधना करते रहने की है। वे तब, संदेह से नहीं अपितु विस्मय से, भगवान् के अवतार के महान् विरोधाभास को व्यक्त करते हैं: कि वे, जो अकर्ता होकर भी कर्म करते हैं, जो जन्मरहित होकर भी जन्म लेते हैं, जो सर्वसंहारक होकर भी शत्रु के भय से भागकर दुर्ग की शरण लेते हैं, तथा जो अपने ही आनन्दमय स्वरूप में रमण करते हुए भी दस हज़ार से अधिक पत्नियाँ ग्रहण करते हैं — यह सब, उद्धव कहते हैं, “ज्ञानियों की बुद्धि को भी चकित कर देता है।”

कर्माण्यनीहस्य भवोऽभवस्य ते
दुर्गाश्रयोऽथारिभयात्पलायनम् ।
कालात्मनो यत्प्रमदायुताश्रमः
स्वात्मव्रतेः खिद्यति धीर्विदामिह ॥ १६ ॥

*karmāṇy anīhasya bhavo 'bhavasya te durgāśrayo 'thāri-bhayāt palāyanam kālātmano yat
pramadā-yutāśramah svātman-rateḥ khidyati dhīr vidām iha*

अर्थ: हे प्रभो! ज्ञानीजन भी चकित हो उठते हैं यह देखकर कि आप, जो कुछ भी नहीं चाहते, फिर भी कर्म करते हैं; जो कभी जन्म नहीं लेते, फिर भी जन्म लेते हैं; जो अजेय काल के भी स्वामी हैं, फिर भी शत्रु के भय से दुर्ग की शरण लेकर भाग जाते हैं; तथा जो केवल अपने ही आत्मस्वरूप में रमण करते हैं, फिर भी अनेक पत्नियों का सांसारिक जीवन अपनाते हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 4, श्लोक 16)

और यह कि वही सर्वज्ञ भगवान्, जिनका ज्ञान अखण्ड, अविच्छिन्न तथा सन्देह-रहित है, तथा जो सदैव जागृत हैं, अपने विचार-विमर्श में मुझे बुलाकर मुझसे परामर्श ले मानो किसी अज्ञानी से — यह भी, उद्धव स्वीकार करते हैं, हमारी बुद्धि को चकित कर देता है। वे अन्ततः प्रार्थना करते हैं कि उन्हें उसी सर्वोच्च तथा समग्र ज्ञान की शिक्षा दी जाए जो ब्रह्मा को दी गई थी, “यदि हम उसे ग्रहण करने योग्य हों,” ताकि वे सांसारिक अस्तित्व के दुःखों से सरलता से पार पा सकें।

जब उद्धव ने अपने मन की यह बात भगवान् के समक्ष रखी, तो कमल-नेत्र भगवान् ने उन्हें अपना दिव्य स्वरूप प्रकट किया। अपने पूज्य गुरु से इस प्रकार परमसत्य को जानने की विधि सीखकर, तथा भगवान् के चरणों में प्रणाम कर, उद्धव ने आदर-भाव से उनकी प्रदक्षिणा की और वहाँ से चले आए — उनका हृदय भगवान् के वियोग की पीड़ा से भारी था, भले ही वह उसी प्रकाश से आलोकित था जो उन्हें अभी-अभी प्राप्त हुआ था। उस अन्तिम दर्शन से हर्षित किन्तु अब वियोग से पीड़ित, उद्धव विदुर से कहते हैं कि वे अब बदरिकाश्रम की ओर, भगवान् के प्रिय निवास-स्थान की ओर, प्रस्थान करेंगे, जहाँ दिव्य नारायण तथा पूज्य ऋषि नर जगत् के कल्याण के लिए दीर्घकाल तक शान्तिपूर्ण किन्तु कठोर तपस्या में लीन हैं।



जुड़े हार्थों तथा काँपते स्वर से, उद्धव भगवान् के अगम्य विरोधाभासों पर प्रश्न करते हैं तथा उनके स्वरूप के रहस्य को उद्घाटित करने वाले सर्वोच्च ज्ञान की प्रार्थना करते हैं
(श्लोक 14-20)।

विदुर का शोक, और आगे बढ़ाया गया प्रश्न

श्रीशुकदेव अब संक्षेप में कथा के बाह्य ढाँचे पर लौटते हैं: अपने प्रियजनों की मृत्यु का यह असह्य समाचार सुनकर विदुर का शोक उमड़ पड़ा, किन्तु उन्होंने अभी-अभी सुनी हुई ज्ञान की शक्ति से स्वयं को स्थिर किया। जब भगवान् श्रीकृष्ण के सेवकों में अग्रणी उद्धव बदरिकाश्रम के लिए प्रस्थान करने वाले थे, तब विदुर — प्रेम से प्रेरित होकर — उनसे प्रत्यक्षतः वही सर्वोच्च ज्ञान माँगते हैं जो स्वयं भगवान् ने सिखाया था: वह ज्ञान जो भगवान् के अपने स्वरूप के रहस्य को उद्घाटित करता है। क्योंकि, विदुर तर्क देते हैं, भगवान् विष्णु के भक्त इस जगत् में केवल अपने सेवकों का प्रयोजन सिद्ध करने के लिए विचरण करते हैं।

उद्धव का उत्तर विनम्रता का एक आदर्श है। यद्यपि उन्होंने अभी-अभी यह शिक्षा स्वयं भगवान् के मुख से प्राप्त की है, वे स्वयं को उसका अन्तिम स्वामी नहीं मानते। इसके बजाय वे विदुर को आगे भेजते हैं: उस ज्ञान के लिए, वे कहते हैं, विदुर को कुशारु-पुत्र महर्षि मैत्रेय की सेवा करनी चाहिए — वही ऋषि जो पीपल वृक्ष के नीचे सुनते हुए खड़े थे, और जिन्हें उद्धव की ही उपस्थिति में, उस घड़ी जब भगवान् इस जगत् को त्यागने की तैयारी कर रहे थे, स्वयं भगवान् ने प्रत्यक्ष शिक्षा दी थी।

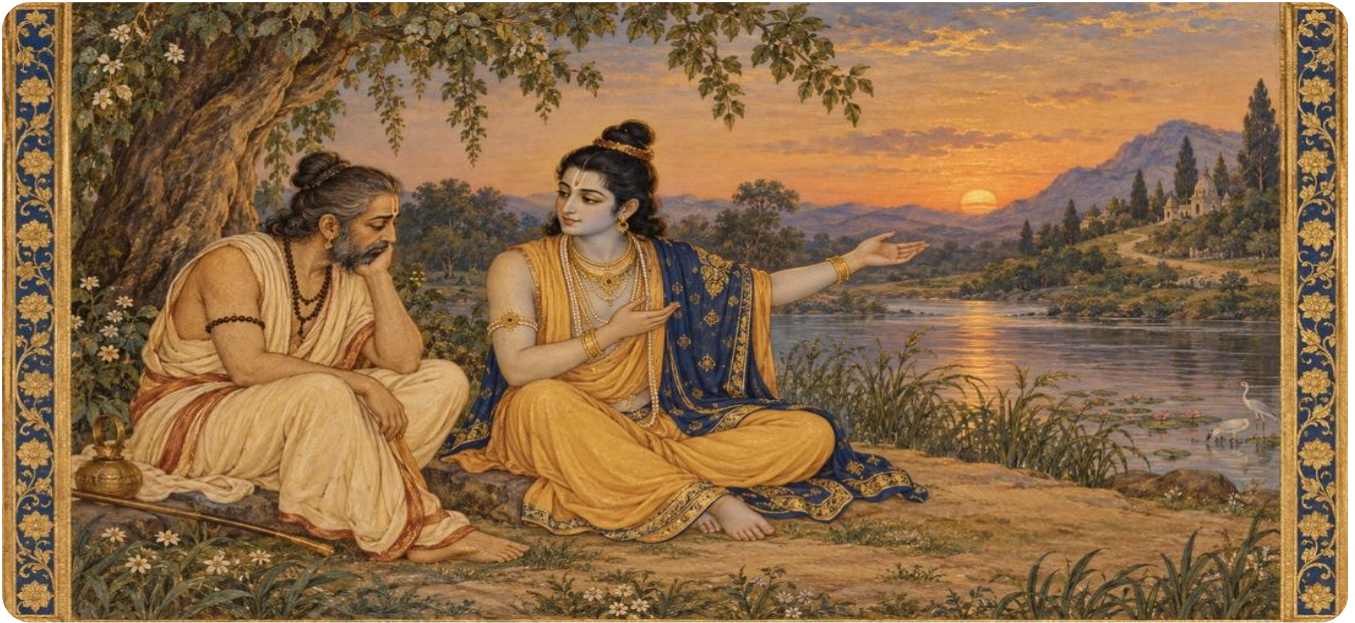
ननु ते तत्त्वसंराध्य ऋषिः कौषारवोऽन्तिके ।

साक्षाद्भगवतादिष्टो मर्त्यलोकं जिहासता ॥ २६ ॥

nanu te tattva-saṁrādhyā ṛṣiḥ kauśāravo 'ntike sākṣād bhagavatādiṣṭo martya-lokaṁ jihāsata

अर्थ: उद्धव ने उत्तर दिया: उस सत्य के ज्ञान के लिए तुम्हें (कुशारु-पुत्र) महर्षि मैत्रेय की सेवा करनी चाहिए, जिन्हें इस विषय में स्वयं भगवान् ने, इस मर्त्यलोक को त्यागने की तैयारी करते समय, मेरी उपस्थिति में प्रत्यक्ष शिक्षा दी थी। (स्कन्ध 3, अध्याय 4, श्लोक 26)

यही वह धुरी है जिस पर सम्पूर्ण तृतीय स्कन्ध घूमता है: वह कारण जिससे विदुर शीघ्र ही मैत्रेय के समक्ष बैठेंगे, तथा वह कारण जिससे हम, पाठकगण, इस ग्रन्थ के शेष भाग को भरने वाली शिक्षा प्राप्त करने वाले हैं। श्रीकृष्ण के गुणों पर विदुर के साथ हुए इसी संवाद से अपने अधिकांश शोक से मुक्त होकर, उद्धव ने वह रात्रि यमुना के तट पर मानो एक क्षण की भाँति बिताई और अगली प्रातः वहाँ से प्रस्थान किया।



बदरिकाश्रम के लिए प्रस्थान करने से पहले, उद्धव विनम्रतापूर्वक शोकाकुल विदुर को महर्षि मैत्रेय की ओर भेजते हैं, जिन्होंने उद्धव की ही उपस्थिति में भगवान् की शिक्षा प्राप्त की थी (श्लोक 23-27)।

एक राजा का प्रश्न: उद्धव अकेले क्यों बचे?

इस बिन्दु पर राजा परीक्षित, श्रीशुकदेव की कथा सुनते हुए, अपना एक स्वाभाविक प्रश्न पूछते हैं। यदि वृष्णियों तथा भोजों के बीच के सबसे बड़े रथी-योद्धा भी उस विनाश में मारे गए — और यदि स्वयं श्रीहरि (श्रीकृष्ण), जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव, तीनों लोकपालों के भी सर्वोच्च शासक हैं, ने जगत् की दृष्टि में अपना शरीर त्याग दिया — तो, परीक्षित पूछते हैं, उन सेनापतियों में अग्रणी उद्धव अकेले कैसे बच गए?

श्रीशुकदेव का उत्तर अन्त से ठीक पहले भगवान् के अपने चिन्तन तक पहुँचता है। जब श्रीकृष्ण, जिनकी इच्छा कभी अधूरी नहीं रहती, ने ब्राह्मणों के शाप के रूप में प्रकट हुए मृत्यु के माध्यम से अपने ही वंश का विनाश करवा दिया, तथा जगत् की दृष्टि में अपना शरीर त्यागने की तैयारी कर रहे थे, तब उन्होंने विचार किया: जब वे स्वयं इस जगत् से चले जाएँगे, तब आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने वालों में अग्रणी, केवल उद्धव ही, अपने विषय के ज्ञान को प्राप्त करने के सर्वथा योग्य हैं। उद्धव, भगवान् ने विचार किया, अपनी इन्द्रियों को वश में करने तथा विषयों से कभी विचलित न होने के कारण, स्वयं से किसी भी प्रकार निम्न नहीं हैं; अतः वे पृथ्वी पर रहकर जगत् को अपने विषय का ज्ञान प्रदान करें। तीनों लोकों के आचार्य तथा वेदों के स्रोत, श्रीकृष्ण द्वारा इस प्रकार निर्देशित होकर, उद्धव बदरिकाश्रम गए और गहन ध्यान के माध्यम से श्रीहरि की आराधना करने लगे।



राजा परीक्षित श्रीशुकदेव से पूछते हैं कि यदुवंश के विनाश में उद्धव अकेले कैसे बच गए; श्रीशुकदेव उत्तर देते हैं कि स्वयं भगवान् ने उद्धव को अपने ज्ञान को जगत् तक ले जाने के योग्य मानकर सुरक्षित रखने का चुनाव किया (श्लोक 28-32)।

अश्रुपूरित विदाई, विदुर गंगा की ओर प्रस्थान करते हैं

अध्याय के अन्तिम श्लोक हमें पुनः विदुर की ओर ले जाते हैं। उद्धव से भगवान् के इन गौरवशाली कार्यों का सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनकर — उस भगवान् का, जिन्होंने विशुद्ध लीला के रूप में मानव-रूप धारण किया था, तथा जिन्होंने अपना शरीर इस प्रकार त्यागा कि वह दृढ़-चित्त लोगों के संकल्प को दृढ़ करने वाला था, फिर भी दुर्बल-मन वालों के लिए, जो पशुतुल्य हैं, अत्यन्त दुष्कर था — तथा यह स्मरण कर कि भगवान् ने उस अन्तिम घड़ी में भी उनका, विदुर का, स्मरण किया था, विदुर भाव-विह्वल हो उठे। उस महान् भक्त से विदा लेते समय वे रो पड़े। फिर, कालिन्दी (यमुना) का तट छोड़कर, ज्ञानी विदुर आगे बढ़े और थोड़े ही दिनों की यात्रा के बाद पावन गंगा-तट पर जा पहुँचे, जहाँ मित्र-पुत्र महर्षि मैत्रेय विराजमान थे।

कालिन्द्याः कतिभिः सिद्धा अहोभिर्भरतर्षभ ।

प्रापद्यत स्वःसरितं यत्र मित्रासुतो मुनिः ॥ ३६ ॥

kālindyāḥ katibhiḥ siddha ahobhir bharatarṣabha prāpadyata svaḥ-saritaṁ yatra mitrā-suto muniḥ

अर्थ: कालिन्दी (यमुना) का तट छोड़कर, ज्ञानी विदुर (भरतवंशियों में अग्रणी) कुछ ही दिनों में स्वर्ग-सरिता (गंगा) के तट पर पहुँच गए, जहाँ महर्षि मैत्रेय (मित्र-पुत्र) विराजमान थे। (स्कन्ध 3, अध्याय 4, श्लोक 36)

इस शान्त चित्र के साथ — एक अकेला, शोकाकुल तीर्थयात्री एक बार फिर एक महर्षि से नई भेंट की ओर बढ़ता हुआ — चतुर्थ अध्याय समाप्त होता है, आगामी अध्यायों में मैत्रेय की चिरप्रतीक्षित शिक्षा के लिए मंच तैयार करते हुए।



उद्धव से विदा लेते हुए रोते हुए, विदुर यमुना का तट छोड़ते हैं और कई दिनों तक यात्रा करके अन्ततः पावन गंगा के तट पर पहुँचते हैं, जहाँ महर्षि मैत्रेय प्रतीक्षारत हैं (श्लोक 33-36)।

इस अध्याय की मुख्य शिक्षाएँ

1. भगवान् अपने ही वंश को अपनी गुप्त योजना से विदा करते हैं, साधारण दुर्भाग्य से नहीं। यदुओं का मद्यजनित आत्म-विनाश देखने में मात्र भ्रातृघाती दुर्घटना लगता है, किन्तु उद्धव स्पष्ट कहते हैं कि स्वयं भगवान् ने इस अन्त को पूर्वदृष्टि से जानकर तथा चाहकर ही इसे घटित होने दिया और शान्तिपूर्वक हट गए — यह स्मरण कराते हुए कि जो शोकपूर्ण दुर्घटना जैसा प्रतीत होता है, वह भी भगवान् की अपनी लीलाओं को समाप्त करने की गुप्त योजना हो सकता है (श्लोक 1-3)।
2. गहनतम शिक्षाएँ गहनतम एकान्त में, केवल शरणागत हृदय को ही दी जाती हैं। भगवान् अपनी सबसे अन्तरंग शिक्षा के लिए न तो कोई सभा बुलाते हैं न कोई समारोह; वे इसे अकेले, एक ही वृक्ष के नीचे, स्वयं अपने प्रस्थान की घड़ी में देते हैं — पहले उद्धव को उनके पूर्वजन्मों की भक्ति का स्मरण कराकर, फिर उसी गोपनीय “भागवत” ज्ञान का, जो सृष्टि के आरम्भ में केवल ब्रह्मा को सुनाया गया था (श्लोक 6-13)।
3. सच्ची भक्ति केवल भगवान् के चरणों की ही कामना करती है। पूछे जाने पर कि वे क्या चाहते हैं, उद्धव जीवन के चार परम्परागत लक्ष्यों में से किसी की भी कामना नहीं करते — केवल निरन्तर आराधना का सौभाग्य चाहते हैं, यह प्रकट करते हुए कि भक्ति का सारतत्त्व स्वयं में एक साध्य है, किसी अन्य वस्तु का साधन नहीं (श्लोक 14-15)।
4. विनम्रता वरदान को सँजोए रखने के बजाय आगे बढ़ाती है। यद्यपि उद्धव को अभी-अभी भगवान् की स्वयं की शिक्षा प्रत्यक्षतः प्राप्त हुई है, वे स्वयं को उसका अन्तिम संरक्षक नहीं मानते; वे विदुर को उसे देने के लिए उचित रूप से नियुक्त मैत्रेय की ओर भेज देते हैं (श्लोक 26)।
5. शोक तथा स्थिरता एक शरणागत हृदय में साथ-साथ रह सकते हैं। विदुर अपने बन्धुओं की मृत्यु पर शोक करते हैं तथा उद्धव से विदा लेते समय रोते हैं, फिर भी उन्हीं श्लोकों में उन्हें “ज्ञानी” कहा गया है, उनका शोक मिटा नहीं अपितु अभी प्राप्त हुए ज्ञान से शमित हुआ है (श्लोक 23, 33-35)।

6. गोपनीय ज्ञान शुद्ध भक्ति से मिलता है, केवल निकटता या विद्वत्ता से नहीं। महर्षि मैत्रेय — एक महान् ऋषि, विद्वान् तथा स्वयं वेदव्यास के मित्र — इस पूरे दृश्य में भगवान् के ठीक निकट खड़े रहते हैं, फिर भी भगवान् विशेष स्नेह से मुस्कराते तथा दृष्टिपात करते हुए उद्धव की ओर ही मुड़कर उन्हें शिक्षा देते हैं। यह अन्तर निकटता या विद्वत्ता का नहीं, अपितु समर्पण की पूर्णता का है: उद्धव का भगवत्-प्रेम किसी दार्शनिक जिज्ञासा अथवा निजी आकांक्षा से रहित है, और यही अमिश्रित भक्ति — मात्र वहाँ उपस्थित होना नहीं — उन्हें भगवान् की सबसे गोपनीय शिक्षा प्राप्त करने योग्य बनाती है (श्लोक 9-10)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में ज्ञान के हस्तान्तरण के स्वरूप में कुछ शान्त रूप से बोधप्रद है। भगवान् सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्मा को शिक्षा देते हैं। युगों बाद, वही शिक्षा भगवान् के अपने प्रस्थान की अन्तिम घड़ी में उद्धव तक पहुँचती है। उद्धव, उसे सँजोकर रखने के बजाय, विदुर को मैत्रेय की ओर भेज देते हैं, जिन्होंने उसे केवल खुले हृदय से समीप खड़े रहकर स्वयं प्राप्त कर लिया था। और मैत्रेय, आगामी अध्यायों में, उसे विदुर को देंगे — जो एक दिन उसे हमें बताएँगे, बीते सभी शतकों के पार। इस शृंखला में कहीं भी कोई उस शिक्षा को अपनी निजी सम्पत्ति नहीं मानता। प्रत्येक प्राप्तकर्ता लगभग तुरन्त ही अगले सच्चे स्रोत की ओर संकेत करने वाला एक दिशासूचक बन जाता है। यही शायद इस अध्याय में छिपी सबसे गहरी शिक्षा है, जो ऊपरी तौर पर अधिकांशतः तर्क-वितर्क जैसा प्रतीत होता है — कौन कहाँ जाता है, कौन किससे पूछता है। भगवान् के विषय का ज्ञान सँजोकर नहीं रखा जाता; वह कोमलतापूर्वक, एक भरे हृदय से एक तैयार हृदय तक आगे बढ़ाया जाता है, ठीक जैसे उद्धव इसे यहाँ विदुर को देते हैं, और ठीक जैसे यह सम्पूर्ण शृंखला अपने छोटे-से ढंग से इसे आप तक पहुँचाने की आशा रखती है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, उस आध्यात्मिक समझ के किसी एक अंश पर विचार करें जिसने वास्तव में आपकी सहायता की है — कोई श्लोक, कोई अन्तर्दृष्टि, स्पष्टता का कोई क्षण जिसे किसी ने कठिन समय में आपके साथ साझा किया था। उसे अपने तक सीमित रखने के बजाय, इस सप्ताह किसी शान्त, स्वाभाविक ढंग से उसे किसी अन्य के साथ साझा करने का प्रयास करें — ठीक वैसे ही जैसे उद्धव ने विदुर को उस शिक्षा को अपनी अकेली सम्पत्ति मानने के बजाय मैत्रेय की ओर संकेत किया। ऐसा करने से पहले, एक क्षण शान्ति में बैठकर दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” उस स्मरण को यह याद दिलाने दें कि हमें प्राप्त हुई प्रत्येक सच्ची शिक्षा स्वयं में एक ऐसा वरदान थी जो आगे बढ़ाया गया था, तथा वह पूर्णतः हमारी तभी होती है जब हम भी उसे आगे बढ़ा दें।

उपसंहार

तृतीय स्कन्ध का चतुर्थ अध्याय भागवत के इतिहास के एक महान् तथा शोकपूर्ण अध्याय — यदुवंश के अन्त — का समापन करता है, साथ ही इसकी केन्द्रीय शिक्षा की ओर मार्ग भी खोलता है। हमने देखा कि भगवान् अपने ही बन्धुओं के मध्य फैली अराजकता के बीच भी एक पीपल वृक्ष के नीचे शान्तिपूर्वक अलग हो गए; हमने देखा कि उन्होंने इस जगत् को त्यागने से पहले अपने सर्वाधिक प्रिय भक्त को एक अन्तिम, कोमल शिक्षा दी; और हमने देखा कि शोक, विनम्रता तथा भक्ति एक जलते दीपक की भाँति हाथ से हाथ आगे बढ़ते गए — भगवान् से उद्धव तक, उद्धव से विदुर तक, तथा अब, अध्याय के अन्त में, गंगा के तट पर मैत्रेय की ओर। प्रथम अध्याय में निर्वासन तथा हानि से आरम्भ हुई विदुर की दीर्घ तीर्थयात्रा अन्ततः उन्हें उसी उत्तर की देहरी तक ले आई है जिसे खोजने वे निकले थे। आगामी अध्यायों में, वह देहरी खुलेगी।

श्रीमद्भागवत की दिव्य ज्ञान-ज्योति हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जाग्रत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), तृतीय स्कन्ध, अध्याय 4, पृष्ठ 146–150।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पंडित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके अर्थ सार-रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा टीका की पुनरावृत्ति नहीं है। किसी भी प्रकाशक से सम्बद्धता अथवा समर्थन का कोई संकेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-3-adhyay-4-vidur-maitreya-ke-paas.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट